सहज कविता

अधतन कविता की त्रैमासिकी

(अवेतनिक सम्पादक)—डॉ० सुधेश

साहित्य-संगम द्वारा प्रकाशित-प्रसारित साहित्य

फिर सुबह होगी ही (काव्य)	डॉ० सुधेश	30 रुपये
घटनाहीनता के विरुद्ध (काव्य)	,,	30 ,,
तेज़ धूप (काव्य)	,,	50 ,,
आधुनिक हिन्दी और उर्दू कविता की प्रवृत्तियाँ (आलोचना)	,,	80 ,,
साहित्य के विविध आयाम (आलोचना)	,,	40 ,,
कविता का सृजन और मूल्यांकन (आलोचना)	,,	80 ,,

आगामी प्रकाशन

साहित्यचिन्तन (आलोचना)	डॉ० सुधेश
गीत और ग़ज़लें (काव्य)	,,
मन की उड़ान (यूरोप यात्रा वृत्तान्त)	,,
उर्दू की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ (कहानी-संग्रह)	अनुवादक-डॉ० सुधेश

प्राप्तिस्थान—

साहित्य संगम, डी-34 विद्याविहार, प्रीतमपुरा, दिल्ली-110034

नया विश्वसनीय स्तरीय त्रैमासिक

अक्षर साथी

सम्पादक—साधुराम दर्शक

सम्पर्क—169 सन्देश विहार, दिल्ली-110034

नये कवियों और पुरानी पीढ़ी के चर्चित
हिन्दी कवियों की प्रतिनिधि कविताओं का संकलन

मध्यान्तर-3

सम्पादक—पुरुषोत्तम प्रशान्त

सम्पर्क—14-7-262 चूड़ी बाज़ार हैदराबाद-500012

सहज कविता

त्रैमासिक

अप्रैल-मई-जून 1994

वर्ष-1 अंक 2

क्रम

विचार विमर्श 2

कविता में सहजता 3

ग़ज़ल—कशफ़ी झांसवी 8

इम्तियाज़ अहमद साग़र 8

मधुशिवम 9

गोपाल गर्ग 9

सुरेन्द्र चतुर्वेदी 10

गीत—सुधेश 11

वेदप्रकाश अमिताभ 12

दोहे—महेश दिवाकर 12

कविताएँ—सुधेश 13

जशवीर सिंह रहबर 14

अपर्णा भट्टाचार्य 14

मूल्यांकन 15

सहज कविता, महज़ कविता—राजीव सक्सेना 16-17

सम्पादक—डॉ० सुधेश

प्रकाशक—श्रीमती सुशीला शर्मा

मूल्य—चार रुपये, वार्षिक—सोलह रुपये, (संस्थाओं के लिए बीस रुपये)

सम्पर्क—फ़्लैट 1335 पूर्वांचल, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय,

नई दिल्ली-110067

विचार विमर्श

आज 'सहज कविता' का अंक मिला। पढ़ गया पूरा। अच्छा लगा आपका दृष्टिकोण। शिल्पपूर्ण कविताएँ सचमुच बौद्धिक व्यक्तियों के लिए होती हैं। कविता पूरे गद्य में भी लिखी जा सकती है, परन्तु काव्यात्मक होने से वंचित नहीं हो सकती। आपकी पत्रिका कोरे शुष्क गद्य से सार्थक कविता को अलग करेगी, ···तथाकथित कवियों को छाँट सकेगी, यही मेरी आशा तथा कामना है।

—डॉ० तारिणी चरणदास चिदानन्द (भुवनेश्वर)

एक 'सहज कविता' का आग्रह सातवें दशक में अलीगढ़ से उठा था। अब आपने भी कविता के सहज होने की अपील की है। सही समय पर की गई अपील है। हर अंक में एक टिप्पणी उन कवियों पर देते रहिये, जिन्हें आप 'सहज कविता' के मुहावरे में उपयुक्त और सटीक पाते हैं।

—डॉ० वेदप्रकाश अमिताभ (अलीगढ़)

'सहज कविता' का प्रवेशांक मिला। आपका यह प्रयास प्रशंसनीय है। किसी भी प्रकार की अभिव्यक्ति का सम्प्रेषणीय होना उसकी पहली शर्त है, जो सहज अभिव्यक्ति द्वारा ही सम्भव है। आधुनिक हिन्दी कविता का अबूझ पहेली बनते जाना वास्तव में एक विचारणीय प्रश्न है। आपने इस प्रश्न पर सम्यक् विचार किया है। बधाई। हार्दिक कामना है कि 'सहज कविता' हिन्दी कविता को सहज गरिमा एवं बोधगम्यता प्रदान करे, सार्थक बहस की दिशा तलाशे और फले-फूले।

—डॉ० दिलीपसिंह (हैदराबाद)

सहज कविता के लिए सहजता आत्मगुण है।···नयी कविता का अत्यधिक गद्यमय होना उसके कवित्व को गहरी क्षति पहुँचा रहा है।···कविता को हृदयपक्ष की ओर से उपेक्षाशील नहीं होने दिया जा सकता। सन्तुलन की आवश्यकता है। ·· सहजता सन्तुलन में है। अंगों का सहज सन्तुलन ही सौन्दर्य का पर्याय है।

—मधुर शास्त्री (दिल्ली)

कविता में सहजता

सहज कविता का एक आवश्यक गुण उसकी सहजता है। पर कविता में सहजता कहाँ से आती है? सहजता कविता पर आरोपित कोई बाहरी साधन नहीं है, बल्कि कविता का एक आन्तरिक गुण है, जिसका सम्बन्ध कविता की प्रकृति से भी है। कविता की रचना एक सहज प्रक्रिया है, जिसका प्रारम्भ प्रेरणा से होता है। प्रेरणा के बिना कविता कोरा बुद्धिविलास होगी। अकबर इलाहाबादी ने जब कहा था—

इश्क को दिल में दे जगह अकबर
इल्म से शायरी नहीं आती

तो उनका आशय यही था कि कविता कोरा बुद्धिविलास नहीं है, बल्कि उसकी रचना किसी प्रेरणा से होती है। 'इश्क' से बड़ी प्रेरणा क्या होगी? 'इश्क' का सूफ़ियाना अर्थ न भी लें तो भी वह जीवन का हिस्सा है। तो कविता की प्रेरणा जीवन से ही आती है, जिसमें न जाने कितने प्रकार के इश्क़ शामिल हैं।

कविता की रचना एक सहज प्रक्रिया इस अर्थ में भी है कि उसका उत्स वास्तविक जीवन है। उसमें जीवन की वास्तविकता व्यंजित होती है। हमारे जीवन पर तात्कालिक आवश्यकताओं, स्वार्थ, झूठ, छलछद्म के चाहे जितने आवरण पड़े हों, पर वास्तविक जीवन अथवा जीवन की वास्तविकता इन आवरणों के कहीं पीछे निहित है। कवि इसी वास्तविक जीवन को कविता में व्यंजित करता है। वह किसी प्रेरणा के वशीभूत हो जब किसी जीवनसत्य का साक्षात्कार करता है अथवा किसी जीवन-सत्य की झलक देख लेता है, तो कविता की रचना-प्रक्रिया शुरू हो जाती है। इस प्रक्रिया का सम्बन्ध प्रेरणा से है और प्रेरणा किसी जीवन संदर्भ से आती है। इस प्रकार कविता की रचना-प्रक्रिया जीवन-प्रक्रिया से जुड़ जाती है। कविता और जीवन में कोई अन्तर्विरोध नहीं रहता। जीवन में कुछ हो और कविता में कुछ और हो, तो वह सहजता की स्थिति नहीं है, विषमता और अन्तर्विरोध की स्थिति है। कविता की सहजता जीवन की सहजता तथा जीवन बोध की सहजता से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती है।

कविता की रचना-प्रक्रिया मूलतः सहज है, पर आधुनिक युग के दबावों, वैज्ञानिकता और बौद्धिक आग्रहों के बलवती होते जाने से कविता की सहजता खण्डित होती जा रही है। कविता के स्थान पर काव्यकला प्रमुख होती जा रही है। भारतीय मनीषा कविता को कला से अलग मानती थी पर आधुनिक कवि कविता को कला बनाने के चक्कर में लगे हुए हैं। सहज कविता कलाहीन नहीं होती, पर कला कविता की स्थानापन्न नहीं है।

छठी शताब्दी में संस्कृत काव्यशास्त्री भामह ने अलंकार को ही कविता के आसन पर बिठाया था। उसके अनुसार अलंकार के बिना कविता सम्भव नहीं थी। यह एक प्रकार का कलावादी दृष्टिकोण था, जिसका विस्तार रीति और वक्रोक्ति सिद्धान्तों में हुआ। आज के आलोचक अलंकार, रीति, वक्रोक्ति सिद्धान्तों की तो भर्त्सना करते हैं, पर वे पश्चिम की रूपवादी आलोचना से इतने आतंकित हैं कि कविता की परिकल्पना कला के रूप में करने के लिए विवश हैं। मेरी मान्यता है कि कविता अनिवार्यतः कला नहीं है। वह जीवन की तरह सहज है। कला कृत्रिमता का ही दूसरा नाम है। कविता में जहाँ कृत्रिमता है, विषमता है, वहाँ सहजता नहीं है। जिस कविता में कृत्रिमता का आग्रह नहीं है अथवा कला के नाम पर कृत्रिमता का आग्रह नहीं है, वही सहज कविता है।

कविता की सहजता को अभिव्यंजना के स्तर पर भी देखा जा सकता है। कविता की रचना-प्रक्रिया में अभिव्यंजना भी सम्मिलित है। अभिव्यंजना रचना-प्रक्रिया का दूसरा चरण है। उसका प्रथम चरण प्रेरणा है। प्रेरणा के बिना अभिव्यंजना निर्जीव होगी। दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रेरणा के अनुकूल अभिव्यंजना हो तो उसमें सहजता होगी। पर यह कैसे हो, यही कविकर्म का रहस्य है। इस सन्दर्भ में कविता में सपाट बयानी की मदद ली जा सकती है। सपाट बयानी हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली न होते हुए भी आलोचकों के बीच ग्राह्य शब्दावली बन गई है। 'बयान' फारसी शब्द है, जो वर्णन के समकक्ष है। 'सपाट' बोलचाल का शब्द है, जिससे सीधा, अकृत्रिम, कलाहीन के अर्थ लिये जा सकते हैं। इस प्रकार 'सपाट बयानी' का सामान्य अर्थ है स्पष्ट कथन, निर्व्याज कथन, स्वाभाविक कथन। 'सपाट बयानी' को संस्कृतकाव्य-शास्त्र में वर्णित स्वभावोक्ति से मिलाया जा सकता है। पुराने संस्कृत आचार्यों भामह और कुन्तक ने वक्रोक्ति में ही काव्यत्व देखा था। उनके विचार में स्वभावोक्ति में काव्यत्व नहीं था। पर दण्डी ने स्वभावोक्ति में भी काव्यत्व के दर्शन किये, और उसका विपर्यय 'ग्राम्यता' को बताया। वक्रोक्ति और स्वभावोक्ति के बीच का यह विवाद पुराना है। अलंकृति, वक्रता और गुण में काव्यत्व खोजने वाली कलावादी दृष्टि एकांगी थी, और स्वभावोक्ति में काव्यत्व मानने वाले आचार्यों ने कविता के कथ्य को महत्त्वपूर्ण मानते हुए उसकी स्वाभाविक अभिव्यंजना अथवा सहज व्यंजना में

भी कवित्व देखा। इस प्रकार स्वभावोक्ति केवल कथन की भंगिमा नहीं थी, बल्कि कविता के कथ्य की सूचक भी थी। इस प्रकार स्वभावोक्ति को अलंकार मात्र समझकर उसे पूरी तरह नहीं समझा जा सकता।

'सपाट बयानी' प्रकारान्तर से स्वभावोक्ति ही है जिससे कवि अपने अभिप्रेत अर्थ को पाठकों तक 'सम्प्रेषित' करता है। जिस प्रकार स्वभावोक्ति अलंकार मात्र नहीं है, उसी प्रकार 'सपाट बयानी' वस्तु का कोरा वर्णन नहीं है, बल्कि यथातथ्य वर्णन है। वर्णन में विस्तार होता है, जिसके चलते अनावश्यक का वर्णन भी संभव है। 'सपाट बयानी' कविता को तभी सफल बनाती है, जब उसमें आवश्यक का ही वर्णन हो, तथ्य का ही वर्णन हो। तथ्य की वास्तविकता का उद्‌घाटन उसे सत्य की संज्ञा प्रदान करता है। इस प्रकार यथातथ्य वर्णन सत्य के निकट पहुँचने की सम्भावना रखता है। इस दृष्टि से देखें तो 'सपाट बयानी' कथन की शैली मात्र नहीं है, बल्कि वह सत्य का आख्यान भी है। सत्य का आख्यान सत्य से अलग नहीं हो सकता।

'सपाट बयानी' में 'बयान' को वर्णन का पर्याय मानकर उसकी उपयोगिता से इनकार किया जाता है। यदि ध्यान दें तो प्रत्येक कविता किसी वस्तु का वर्णन है। महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि वर्णन कैसे किया गया और उसकी तान कहाँ टूटती है। यदि वर्णन सत्य तक ले जाने के बजाए शब्दों की भूलभुलैया में भटका देता है, तो वह कविता के काम का नहीं है। आवश्यक का वर्णन तो करना ही होगा। उससे बचना कविता को पहेली बना देगा अथवा कविता के स्थान पर पहेली रची जाएगी। तो वर्णन अपने आप में गर्हित वस्तु नहीं है, उसका दुरुपयोग अवगुण हो सकता है। इस प्रकार 'सपाट बयानी' कोरा वर्णन नहीं है।

कविता को सहज बनाने में 'सपाट बयानी' उपयोगी हो सकती है, अथवा स्पष्ट कथन, निर्व्याज कथन और स्वाभाविक कथन से कविता में सहजता आ सकती है। स्पष्ट कथन के लिए पहले वस्तु का स्पष्टबोध अपेक्षित है, फिर स्पष्ट कहने का साहस। यदि वस्तु का स्पष्टबोध है और कथन का साहस भी है, तो स्पष्ट कथन से अधिक महत्त्वपूर्ण वह वस्तु बन जाती है, जिसका कथन किया जा रहा है और तब कथित वस्तु की प्रामाणिकता 'सपाट बयानी' की वकालत करने लगती है। यदि वस्तु का स्पष्टबोध नहीं है, और स्पष्ट कथन का साहस नहीं है तो कवि प्रतीकों, बिम्बों, अलंकारों के आवरण ढूँढ़ने लगता है और उन्हीं की योजना करके कविकर्म की इतिश्री समझने लगता है।

कविता में 'सपाट बयानी' का विरोध इस आधार पर भी किया जाता है कि 'सपाट बयानी' में कलात्मकता का अभाव माना जाता है। कला का कोई अन्तिम मानदण्ड निर्धारित नहीं किया जा सकता। आलोचक अपनी-अपनी दृष्टि से कला को परिभाषित करते हैं। प्रायः आलंकारिक, प्रतीकात्मक, विम्बात्मक,

सूक्ष्माभिव्यंजनात्मक शैली को कलात्मक माना जाता है। प्रश्न यह है कि सहज-व्यंजना, सरल शब्दावली, 'सपाट बयानी' में भी कोई कला है या नहीं? मेरा विचार है कि अभिप्रेत अर्थ की कुशल व्यंजना में ही कला है, और व्यंजना-कौशल के अनेक उपाय या ढंग हैं। केवल अलंकार, प्रतीक, बिम्ब के प्रयोग तक ही काव्य-कला सीमित नहीं की जा सकती। सरल, सहज अभिव्यक्ति भी कलात्मक हो सकती है, पर उसकी कलात्मकता आलंकारिक उक्ति की कलात्मकता से भिन्न प्रकार की होगी। इसलिए 'सपाट बयानी' सदैव कलाविहीन होगी, यह नहीं कहा जा सकता। सरल स्वाभाविक कथन कभी इतना मार्मिक होता है कि आलंकारिक उक्ति उसके सामने निस्तेज हो जाती है। मीर का एक शैर है—

नाज़की उनके लब की क्या कहिये,
पंखड़ी इक गुलाब की सी है।

इसमें अधरों की कोमलता का सहज वर्णन है और यदि गुलाब की पंखड़ी से उसकी उपमा दी गई है तो यह उक्ति मात्र उपमा के कारण आकर्षक नहीं हो गई है, बल्कि गुलाब की पंखड़ी के सटीक प्रयोग से प्रभावपूर्ण हो गई है। इस प्रकार दुरूहता, विचित्रता, बाह्य कलेवर के शृंगार में ही कला नहीं है, बल्कि सरलता, सहजता, स्वाभाविकता, आन्तरिक गुण और कथ्य की मार्मिकता में भी कला के दर्शन हो सकते हैं। सच्ची कला को कुछ चौखटों में बांध कर नहीं रखा जा सकता। सच्ची कला बाह्य सौन्दर्य के बजाए आन्तरिक सौन्दर्य में है। सपाट बयानी यदि आन्तरिक सौन्दर्य का उद्‌घाटन करती है तो वह भी कलात्मक हो सकती है।

कविता की सहजता का सम्बन्ध उसकी सम्प्रेषण शक्ति से भी है। जो कविता सामान्य पाठकों तक नहीं पहुँचती अथवा बहुत थोड़े और विशिष्ट पाठकों द्वारा ही ग्राह्य होती है, वह अपनी प्रतीकयोजना, विम्बात्मकता, आलंकारिकता के बावजूद सहज नहीं है। कविता की सहजता इसलिए काम्य है कि उससे सम्प्रेषण की सम्भावना अधिक होती है। कविता कवि की आत्माभिव्यक्ति होते हुए भी मात्र आत्मालाप नहीं है, बल्कि उसकी सार्थकता दूसरे व्यक्तियों अर्थात् पाठकों के संदर्भ में है। इस तरह कविता पाठकों तक सम्प्रेषित होने के लिए भी है। भले ही प्रथमतः वह कवि के लिए हो। जिस कविता के अभिव्यंजना-शिल्प में सहजता, स्वाभाविकता, मार्मिकता होगी, वह अधिक लोगों तक सम्प्रेषणीय होगी।

सम्प्रेषण की पहली शर्त अर्थग्रहण है, मात्र शाब्दिक अर्थ का ग्रहण नहीं, अभिप्रेत अर्थ का ग्रहण। यह तभी सम्भव होगा जब कवि द्वारा अभिप्रेत अर्थ की व्यंजना सहजरीति से हुई हो। सहजता का आशय अभिधा नहीं है, यद्यपि वह अर्थग्रहण का प्रस्थान बिन्दु है। सहजता प्रेरणा से उद्दीप्त सत्य को निर्व्याज रूप

से प्रस्तुत करने में है। जिस कविता में 'सत्य का बोध' कवि को स्पष्टत: नहीं होता उसमें उसकी पूर्ति वह कृत्रिम उपायों अर्थात 'व्याज' के माध्यम से करता देखा जा सकता है। सत्य के सम्यक्बोध से अभिप्रेत अर्थ की व्यंजना सम्भव होगी और तभी अभिप्रेत अर्थ का ग्रहण हो पाएगा। अभिप्रेत अर्थ के ग्रहण से ही कविता पाठकों तक सम्प्रेषित होगी। पर सम्प्रेषण अर्थग्रहण तक सीमित नहीं है। उससे आगे बढ़कर वह सत्य का सम्यक् बोध भी है, और सत्य का बोध केवल सूचना प्राप्ति नहीं है, बल्कि एक जीवन्त अनुभव है। कविता का सम्प्रेषण तभी सम्पूर्ण होता है, जब वह पाठकों के अनुभव का हिस्सा बन जाए। यह कृत्रिम उपायों के बजाए सहजव्यंजना द्वारा अधिक सम्भव हो सकता है। इस प्रकार सहजव्यंजना कविता के सम्प्रेषण में सहायक होती है। जहां कृत्रिम उपायों का सहारा लिया गया है, वहां पहले तो कृत्रिमता के दुर्ग में प्रवेश करना पड़ेगा, जिसके लिए अतिरिक्त तैयारी और साधन सम्पन्नता अपेक्षित है। यह साधन सम्पन्नता शिक्षा की है, शास्त्र ज्ञान की है, जिसके बारे में यह दावा नहीं किया जा सकता कि वह सबको सुलभ है अथवा अधिकांश पाठकों को सुलभ है। वैचित्र्य, अप्रस्तुत विधान, प्रतीक योजना, विम्बविधान, छन्दनिर्वाह आदि में एक विशिष्टकला होती है, पर वह सबकी पहुंच के बाहर है, और महत्वपूर्ण बात यह है कि कला उपर्युक्त उपायों तक सीमित नहीं है। सच्ची कला इस बात में है कि अभिव्यंजना के सभी उपायों की कृत्रिमता तिरोहित हो जाए, और वे रचना में इस प्रकार घुलमिल जाएं कि उन्हें अलग से पहचानने की आवश्यकता न रहे अथवा वे कथ्य में सहजरूप से सन्निविष्ट हो जाएं। इस प्रकार कला का उत्कर्ष उसकी सहजता में है अथवा सहजता में सच्ची कला है।

मैं कविता में सहजता या सहज कविता की वकालत इसलिए कर रहा हूं कि वही वास्तविक कविता है, जिसका पाठकों के बड़े वर्ग तक सम्प्रेषण सम्भव है। अन्यथा आज की कविता विशिष्ट पाठकों तक, कक्षाओं तक, कवियों तक और कविता के आलोचकों तक सीमित रह गई है। हिन्दी साहित्य के प्रेमियों और पाठकों की जितनी विशाल संख्या है, उसमें कविता के प्रेमियों और पाठकों की संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम होगी। इसका प्रमुख कारण आज की कृत्रिम हिन्दी कविता है, जिसकी चर्चा मैंने 'सहज कविता' के पिछले अंक में की थी। —**सुधेश**

कवियों से

युवा कवियों से आग्रह है कि वे अपनी दस-दस अप्रकाशित कविताएँ भेजें। चुनी हुई कविताओं को आलोचकों के मूल्यांकन सहित प्रकाशित किया जाएगा। 'सहज कविता' के सदस्य बनें। शुल्क मनीआर्डर से भेज सकते हैं। अपने मित्रों को सदस्य बनाएँ। **सम्पादक**

ग़ज़ल

मौजों के साथ तह में उतरना पड़ा मुझे
मैं डूब तो गया था उभरना पड़ा मुझे।

फूलों की हर तरफ़ थी नुमाइश लगी हुई
हर ज़ख़्मे दिल छुपा के गुज़रना पड़ा मुझे।

तेरी रिज़ा के साथ ही मेरा वजूद था
तू जो हुआ ख़फ़ा तो बिखरना पड़ा मुझे।

कुछ यूँ फ़रेब मेरी ही परछाईं ने दिये
अपनों के साथ रहके भी डरना पड़ा मुझे।

"कशफ़ी" ख़ताए इश्क़ की ऐसी सज़ा मिली
इक दिन बुलन्दियों से उतरना पड़ा मुझे।

—कशफी झाँसवी

चला था जानिब-ए-मंज़िल तो मैं अकेला था
ग़मों की आंधी चली रहबरी निभाने को।

मैं बेफ़िक्र था न बर्बादी का गुमाँ था मुझे
गुलों के शोले चले आशियाँ जलाने को।

उसी ने घोल दिया ज़हर मेरे प्याले में
कहा था मैंने जिसे तिश्नगी बुझाने को।

न मुफ़लिसी की चुभन न अलम था 'साग़र'
पलट दे काश ख़ुदाया इसी ज़माने को।

—इम्तियाज अहमद 'साग़र'

प्यार के ख़ातिर है छोटी ज़िन्दगानी,
नफ़रतों में ही गुज़रती जा रही है।

चलते चलते मोड़ पर दिल रुक गया क्यों
याद क्या उसकी सँवरती जा रही है।

आसमां चुप है नदी की आंख गीली,
धरती की क़िस्मत बिगड़ती जा रही है।

—मधु शिवम

पीर पराई ढूँढ़ रहा हूं।
क्यों रुसवाई ढूँढ़ रहा हूं।

अपने ही पदचिन्ह रात में,
नींद न आई, ढूँढ़ रहा हूं।

महानगर में गाँव से भागा,
छोटा भाई ढूँढ़ रहा हूं।

बिन-बाती के दीप की ख़ातिर,
दिया-सलाई ढूँढ़ रहा हूं।

दर्पण ने उसकी मुस्काहट,
कहाँ छिपाई, ढूँढ़ रहा हूं।

कुछ बातें बचपन में माँ से,
सुनी-सुनाई ढूँढ़ रहा हूं।

गुमसुम अस्त हुए सूरज की,
तट-परछांईं ढूँढ़ रहा हूं।

—गोपाल गर्ग

दिन से न कोई रिश्ता ना रात से रिश्ता है,
हर शख्स का दुनियाँ में हालात से रिश्ता है।

मैं नाव हूँ काग़ज़ की डूबूँगा यक़ीनन पर,
यूँ ख़ुश हूँ कि मेरा भी, बरसात से रिश्ता है।

देखे जो बुरे दिन तो ये बात समझ आई,
इस दौर में यारों का औक़ात से रिश्ता है।

इक रोज़ भिखारी ने हंस कर ये कहा मुझसे,
लोगों से नहीं मेरा ख़ैरात से रिश्ता है।

वो आज भी मंदिर की दहलीज़ पे रोता है,
लगता है कि पत्थर से जज़बात का रिश्ता है।

सूखे हुए दरिया से इक नाव लगी कहने,
क्या जाने तेरा-मेरा किस बात से रिश्ता है।

चेहरों के मुखौटों के पीछे ये हक़ीक़त है,
लोगों को हंसी का भी सदमात से रिश्ता है।

—सुरेन्द्र चतुर्वेदी

प्रकाशकों से

प्रकाशक नये कवितासंग्रहों की दो-दो प्रतियाँ भेजें तो उनकी समीक्षा 'मूल्यांकन' स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित की जाएगी। कवि भी अपने कविता संग्रह भेज सकते हैं। कविता सम्बन्धी आलोचनात्मक पुस्तकों का भी स्वागत होगा।

—सम्पादक

गीत

फिर गगन में घिर गये बादल।

किसी अपयश की तरह छाये,
नेता सरीखे गरजते आये,
प्यास फैलाती रही बाँहें
ताल पीते रहे गंगाजल।

ये न बरसें तो नहीं बरसें
अगर बरसें तो क़हर बरसें
रहे बिखरे आम जनता से
पर समय पर कर रहे जलथल।

ये बरसते शुष्क टीलों पर,
मांस खोजी बाज़ चीलों पर
खेत की आंखें रहीं प्यासी
इन्द्र नगरी आंजती काजल।

आंधियों ने उम्र भर घेरा
कटी जैसे पतंग नभ में जा
खून की बारिश न फिर क्यों हो
लाठियों में घिर गये बादल।

धूप में सँवला गई काया,
तभी शीतल मेघ की छाया
किसी की छाया नहीं ढूँढो
उड़ मुझे बतला गये बादल।

—सुधेश

उत्सवों का शोर मन को बाँधता है,
भूलिये मत चुप्पियों के बीच से भी रास्ता है।

सुख तपन में ओस का अहसास है,
पीर जीवन की चिरन्तन प्यास है,

दर्द अपना आपने खुद ही पढ़ा
दूसरों की टीस को सारा ज़माना बाँचता है।

लिप्त हों जब चांदनी बन स्वार्थ में,
है बहुत सुख विषधरों के साथ में,

आप थोड़ा सन्त होकर देखिये,
एक रिश्ता दूसरे को किस अदा से काटता है।

रौद्रमय वीभत्स यह संसार है
आज भी अनमोल केवल प्यार है,

गीत हो या गद्य कुछ अन्तर नहीं
बात यह इस सम्पदा को कौन कितना बांटता है ?

—वेदप्रकाश अमिताभ

दोहे

दर्द कसक पीड़ा घुटन मिले नियति उपहार,
मन के जीते जीत है मन के हारे हार।

मँहगाई की मार ने बदले सब आचार,
खड़े-खड़े सब देखते नाते रिश्तेदार।

दुष्ट कभी छोड़े नहीं जीवन के छलछन्द,
जैसे रस्सी के जले नहीं छूटते फन्द।

—महेश दिवाकर

सत्य

जन्म लेता और मरता आदमी
ए क बा र
इन के बीच में हैं कितने विश्व युद्ध
भूगोल की सिकुड़ती फैलती टकराहटें
हिंसक जानवर से अधिक हिंसक आदमी
इतिहास का भयानक सत्य,
आदमी ही इसे झुठलाता
दधीची हड्डियों से
ययाति अपने तन के मांस से
गौतम बुद्ध करुणा से
गांधी अहिंसा से ।

किसी भूगोल या इतिहास
या विज्ञान से भी बड़ा है आदमी,
पर भूगोल बन्द कमरों के
इतिहास के रंगीन चश्मे
देखने ही नहीं देते सत्य
इस ज़िन्दगी में
मिलती एक बार,
जन्म लेता और मरता आदमी
बस एक बार ।

—सुधेश

चाँद

क्षितिज के नीचे
डाल पर
ललाया आधा चाँद
चमक रहा है
मानो किसी सेज पर
साजन की बाँहों में
ढका खुला धरती का चन्दा
दमक रहा है।

—जशवीर सिंह रहबर

क़स्बा

मेरी मां
गाँव को देवता बनाने में
मर गई
मेरे पिता
शहर को राक्षस बनाने
जीवित हैं,
मैं हूँ दोनों के बीच
न मरी न जीवित
बल्कि
अफवाह को बनाने वाहवाह
बन गयी हूँ
क़स्बा।

—अपर्णा भट्टाचार्य

मूल्यांकन

रेखांकित रेखाएँ[1] नरेन्द्र राय का काव्य संग्रह है, जिसे कवि ने अपने मित्र की फरमाइश पर चार पंक्तियों के मुक्तक की शैली में लिखा है। कवि चित्रकार भी है। चित्रकार के लिए रेखा का बड़ा महत्त्व है। बस इसी रेखा के इर्दगिर्द कवि ने मुक्तकों की रचना कर डाली। प्रत्येक मुक्तक में दूसरी चौथी पंक्ति में 'रेखा' शब्द की आवृत्ति हुई है, जिससे एक प्रकार की यान्त्रिकता आ गई है। लगता है कि कवि समस्या पूर्ति के ढर्रे पर बौद्धिक व्यायाम कर रहा है। यों कवि ने विविध विषयों को लिया है, पर उसने अपने लिए रेखा की जो सीमा निर्धारित कर ली है, उसमें कैद होकर कविता की क्षति हुई है।

चित्रकार यदि कवि भी है तो स्वागत योग्य है। पर आवश्यक नहींकि कविता लिखते समय उस पर चित्रकार ही हावी रहे। फिर चित्रकार रेखाएँ ही नहीं खींचता, रंग भी भरता है। रंगों की विविधता इस संग्रह में उपलब्ध नहीं है। हाँ, साज सज्जा अवश्य रंगीन है।

पर आन्ध्र प्रदेश में रहकर नरेन्द्र राय काव्य-साधना कर रहे हैं, इसके लिए उन्हें बधाई।

देशवाली[2] डॉ० अंजनी कुमार दुवे 'भावुक' का कविता संग्रह है। इसका शीर्षक भ्रामक है। असम की बराक घाटी में रहने वाले हिन्दी भाषियों को बंगाली के ढंग पर देशवाली कहा जाता है। इस संग्रह में उस घाटी के हिन्दी भाषी चाय श्रमिकों की समस्याओं से सम्बन्धित कविताएँ हैं। समस्याओं की ओर तो कवि ने अपनी भूमिका में भी संकेत किया है, पर चाय बागान के श्रमिकों के जीवन और उनकी समस्याओं को कविता बनाने में भावुक जी को अधिक सफलता नहीं मिली है। वर्णन की इतनी अधिकता है और गद्यात्मकता का इतना अतिरेक है कि अधिकांश कविताएँ सपाट हो गई हैं। कवि की भावना की सच्चाई, चित्रित समस्याओं की प्रामाणिकता और बराक घाटी के वीभत्स यथार्थ से इनकार नहीं किया जा सकता, पर अभिव्यंजना-शैली कविता के बजाए गद्य की ओर अधिक झुकी हुई है।

—दूरदर्शी

---

1. रेखांकित रेखाएँ—कवि नरेन्द्र राय, श्याम प्रकाशन, हैदराबाद-500264 प्रथम आवृत्ति—पृष्ठ 80, मूल्य 75 रुपये
2. देशवाली—कवि अंजनी कुमार दुवे 'भावुक'—प्रकाशक अनुल्लिखित—1994 का संस्करण—पृष्ठ 95, मूल्य अनुल्लिखित।

सहज कविता, महज़ कविता

भाई सुधेश ने 'सहज कविता' नारे के साथ इसी शीर्षक से कविता-पत्रिका निकाली, यह स्वागत योग्य है। यह इस बात का द्योतक है कि इस समय की कविता-धारा से बहुत लोगों को सन्तोष नहीं हो रहा है और वे किसी ऐसी रचना-प्रक्रिया पर बल देना चाहते हैं जिनसे कविता सहज मालूम हो और उसमें बनावटी-पन न प्रकट हो।

इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दी कविता की परम्परा में सहजता पर बल नहीं रहा है जैसा कि उर्दू कविता में है। ग़ालिब या मीर की हिन्दवी में वाक्य को तोड़-मरोड़कर 'कविता पैदा' करने का कौशल नहीं दिखाई देता जबकि हिन्दी का कवि सीधा वाक्य लिखना गद्य लिखना मान लेता है। छायावादी कवि क्रियापद पूरा लिखना सहन नहीं करते थे। उनसे पहले मैथिलीशरण गुप्त में क्रियापद और कर्त्ता तथा कर्मवाचक अभिव्यक्ति में काफी दूरी रखी जाती थी।

यह 'कृत्रिमता' या भाषा की सहजता मिटाने का प्रयास हिन्दी कविता में शायद छंद का 'निर्वाह' करने की विवशतावश पैदा होता था। हिन्दी छंद में दीर्घ अक्षर का वाचन लघु मात्रिक अक्षर की तरह नहीं किया जा सकता जैसी कि उर्दू में इजाज़त है। इसलिए जहाँ उर्दू में वाक्य-रचना में सहजता स्वाभाविकतया बनाए रखी जा सकी, हिन्दी कविता में नहीं।

इस विवशता को दूर करने में मुक्त छंद ने काफी योगदान दिया। किन्तु हाल के वर्षों में यह स्पष्ट हो गया है कि इससे पद्य और गद्य में भेद मिट गया है और सुधेश जी ने यह ठीक ही इशारा किया है, "आज की हिन्दी कविता की लोकप्रियताहीनता का एक बड़ा कारण उसकी गद्यात्मकता है—ऐसी गद्यात्मकता जिसमें न गद्य की स्पष्टता और तार्किकता है और न कविता की लय और न अभिव्यंजना की सहजता तथा प्रेषणीयता।"

इसी दुर्बलता से खीझकर हिन्दी के अनेक कवि—जिनमें नागार्जुन प्रमुख हैं—यह आग्रह करने लगे हैं कि हिन्दी कविता में छंद की वापसी होनी चाहिए। नागार्जुन तो यह माँग प्रगतिशील लेखक आंदोलन से करते आ रहे हैं और अगर हमने इस प्रश्न को गम्भीरता से नहीं उठाया तो इसका एक कारण यह है कि हिन्दी की प्रकृति सुरक्षित रखते हुए छंद रचना करने में 'सहजता' नष्ट होने का व्यापक खतरा है। दूसरी तरफ़ गद्यात्मकता का खतरा है। तब सुरक्षित मार्ग यही है कि छंद रचना का स्वागत किया जाए और जहाँ कवितात्मकता पैदा करते हुए गद्य लिखा जा सकता है, उसकी स्वतंत्रता की रक्षा की जाए।

पिछले तीन-चार दशकों का अनुभव यह है कि कविता के विभिन्न अंगों की शल्यात्मकता से परीक्षा करते हुए हमने कभी इस अंग पर तो कभी उस अंग पर बल दिया और विभिन्न धाराओं का नामकरण, उनकी श्रेष्ठता की प्रस्थापन की। यह वैसा ही है कि हाथी के अंगों को छूकर अपने स्पर्श में आए भाग की परिभाषा

करने का प्रयत्न करना। सुधेश जी स्वयं इस खतरे से गुज़रते नज़र आते हैं। उदाहरण के लिए, वह अपने सम्पादकीय में कहते हैं," सहज कविता में प्रतीक, बिम्ब, अप्रस्तुत विधान का समावेश स्वाभाविक रीति से होता है, पर वे कविता के साध्य न होकर अभिव्यंजना के माध्यम-भर होते हैं। इन्हें कविता का पर्याय नहीं माना जा सकता। इन्हें कविता का पर्याय मानने से कृत्रिमता शुरू हो जाती है।" (स्पष्ट ही, यहाँ हाथी की परिभाषा करने में अंधों की सीमा जैसी विडम्बना है।) आखिर सूँड के बिना हाथी की कल्पना नहीं की जा सकती, लेकिन सूँड को हाथी का पर्याय मानना क्या विडम्बना नहीं होगा ? मुश्किल यही है कि कविता के सभी गुणों का, जिन्हें सुधेश जी ने अनेक प्रकार से निभाया है, समावेश करना और उनमें काव्योचित सन्तुलन पैदा करना ही काव्य-कला है।

हर कला की तरह काव्य-कला भी एक कौशल है और इस कौशल का विकास करना कवि के लिए एक साधना माना जाता है। कवि के कौशल का विकास तब तक होता है जब तक उसमें अपनी कला के विकास की क्षमता रहती है। अधिकांश कवियों में और लेखकों में अपने कौशल के विकास की क्षमता बहुत दिनों नहीं रहती। ऐसे बीसियों उदाहरण हैं कि कवि-लेखक दस-बीस बरस खूब चमके और उसके बाद ऐसे तिरोहित हुए कि उनके जीवित रहते हुए भी लोगों को नहीं मालूम रहता कि वे अभी जीवित हैं। मैं कविवर सुमित्रानंदन पन्त का बड़ा प्रशंसक रहा हूँ, किन्तु 1946 में जब वह पांडिचेरी में ऋषि अरविन्द के आश्रम से नई रचनाओं का पुलिंदा लेकर लौटे तो मुझे बम्बई की एक गोष्ठी में उनकी कविताएँ सुनकर यह कहना पड़ा कि नई रचनाएँ उनकी कला के ह्रास की द्योतक हैं। सौभाग्य से मेरे विचारों से अधिकांश उपस्थित लेखक (जिनमें उस समय के प्रमुख लेखक और कवि थे) इससे सहमत थे। उधर निराला जी भी जिनकी लोकगीतों जैसी रचनाओं में एक नई ताज़गी थी, जिनकी मैंने 'नया साहित्य' के निराला अंक में भूरि-भूरि प्रशंसा की थी, उसी स्थिति में आ गये। कला का नवीकरण और विकास हर युग में उसके किसी पक्ष-विशेष के विकास से ही सम्भव होता है।

सुधेश जी की 'सहज कविता' हमें अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति की कमज़ोरियों को दूर करने में और सम्प्रेषणीयता बढ़ाने में योगदान दे तो बड़ा महत्त्वपूर्ण काम होगा। यह योगदान अच्छी कविताओं के प्रकाशन से ही सम्भव है। प्रथम अंक में मुझे दिनेशचन्द्र द्विवेदी और वेदप्रकाश अमिताभ की कविताओं में अच्छी सामर्थ्य दिखाई दी। रणजीत तो मँजे हुए कवि हैं और उनकी कविता 'क्यारी-बीज संवाद' में उनकी सम्पन्नता के दर्शन सहज ही होते हैं। विश्वास है, आगामी अंक और अधिक श्रेष्ठ कीर्तिमान स्थापित करेंगे।

—राजीव सक्सेना (दिल्ली)

SAHAJ KAVITA, A Hindi quarterly
R. No, 5/AL/1993

हमारा अपना
साथी – जिसे कहीं
भी घर जैसा
वातावरण लगेगा।

एन टी पी सी के देश भर में फैले 15 प्रोजेक्टों में आप उसे तथा उसके जैसे 22,000 से अधिक अन्य व्यक्तियों को पायेंगे। वह कहाँ से आया है यह बात इतना महत्व नहीं रखती क्योंकि एन टी पी सी के प्लांट तथा टाऊनशिप में अनेकता में एकता है।

जहाँ लोग देश के विभिन्न क्षेत्रों से विभिन्न जातियों तथा भाषा के होने के बावजूद पूर्ण सौहार्द्र के वातावरण में रहते तथा काम करते हैं।

वे अपने आपको तथा एक-दूसरे को विभिन्न संस्कृतियों से परिचित कराते हैं जिससे उनमें एक दूसरे के प्रति सम्मान की भावना जागृत होती है तथा साथ ही साथ एकता की अनुभूति भी।

देश की एकता।

एन टी पी सी में जीवन की प्रेरणा है।

NTPC
नेशनल थर्मल पावर कारपोरेशन

नेशनल थर्मल पावर कारपोरेशन लिमिटेड
(भारत सरकार का उद्यम)

हिन्दी का विचारोत्तेजक, जीवन्त, संग्रहणीय त्रैमासिक

विषयवस्तु

सम्पादक—डॉ० धर्मेन्द्र गुप्त
सम्पर्क—274 राजधानी एन्क्लेव, शकूरबस्ती, दिल्ली-110034

नव लेखकों की प्रबुद्ध साहित्यिक त्रैमासिकी

सूर्य और अन्धकार

सम्पादिका—डॉ० मधुशिवम्
सम्पर्क—4-14/एम० 1 आई आई टी कैम्पस, नई दिल्ली 110016

सहज कविता-कार्यालय—1335 पूर्वांचल, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली-110067
तरुण प्रिंटर्स, रोहताशनगर, शाहदरा, दिल्ली-110032 द्वारा मुद्रित

आवरण—राजेश शर्मा